Volume-7, No. 1 Feb.-2020, pp. Hin.26-28

छायावादी हिन्दी साहित्य एवं तत्कालिक राष्ट्रवाद की चुनौतियांः सामाजिक विसंगति के संदर्भ में

श्री नरेन्द्र कुमार, शोधार्थी
राजनीति विज्ञान विभाग,
शहीद मंगल पाण्डें राजकीय स्नाकोत्तर महिला महाविद्यालय,
मेरठ उत्तर–प्रदेश भारत।

प्रस्तावना–
आज भारत दुनिया में दूसरी सबसे बड़ी जनसख्या, एवं दुनिया के शीर्ष रक्षा–सुरक्षा निकाय, आर्थिक तंत्र का हिस्सा है। किन्तु प्रस्तुत भारत के हालात, जातिगत हिंसा, धार्मिक उन्माद के नाम पर साम्प्रदायिक तनाव, प्रशासनिक भ्रष्टाचार एवं शासन में अनैतिक व भ्रष्ट आचरण युक्त नेतृत्व ने देश की सांस्कृतिक एकता में विविधता एवं भारतीय उपमहाद्वीप की पवित्र व आध्यात्मिक पहचान पर संकट प्रस्तुत कर दिया है। इस संकट की परिस्थिति पर छायावाद हिन्दी साहित्य ने अनेकों प्रस्तुति दी है, जिसमें प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंद पंत, महादेवी वर्मा आदि ने महाराणा महत्व, आसू, गोदान, युगान्त, युगांतर, अनामिका, अर्चना, निहार, रश्मि, नीरजा, एकलव्य, अनंत के पथ आदि काव्य रचनाओं के माध्यम से प्रस्तुति दी है। जिनमें समाज में व्याप्त द्वेष व छूआछूत एवं खोए हुए आत्मविश्वास को उभारने का प्रयास किया गया है। इस छायावादी युग को मुकुटधर पाण्डेय ने श्री शारदा पत्रिका में एक निबंध पत्रिका में छायावादी शब्द के रूप में प्रयोग प्रस्तुत किया है, जिसका उन्होंने कृति प्रेम, नारी प्रेम, मानवीकरण, सांस्कृतिक जागरण कल्पना प्रधानता आदि को छायावादी काव्य की विशेषता के रूप में बताया है। हालांकि छायावादी युग का विकास ब्रज के क्षेत्र से हुआ है जिसमें खड़ी बोली का प्रयोग किया गया है। अतः इसे साहित्यिक खड़ी बोली का स्वर्ण युग कहा जाता है।

मुख्य शब्द–छायावादी, हिन्दी साहित्य, राष्ट्रवाद

छायावाद साहित्य की पृष्ठभूमि के विकास की कल्पना करे तो जहां यह युग पैदा हुआ यहां सैकड़ों वर्षों तक राजनीतिक संप्रदायिक तनाव की मौजूदगी ने हिन्दी व क्षेत्रीय भाषा विचलित कर दी। जिससे माना गया हिन्दी का द्विवेदी युग के उत्थान व प्रोत्साहन की नई कल्पना छायावादी युग रहा। क्योंकि राजनीतिक संघर्ष व सामाजिक कुकल्पनाओं की कुपरम्पराओं ने हिन्दी साहित्य को नीरस उपदेशात्मक व रतिकृत्तात्मक इस तरह से पाट दिया कि हिन्दी साहित्य दम तोड़ने लगा। जिसे द्विवेदी युग का अंग के रूप में प्रस्तुत किया गया।

20वीं शताब्दी में भारतीय महाद्वीप की बनती–बिगड़ती राजनीकि संस्थानों ने सामाजिक संरचना को भी विचलित कर दिया। जहां वर्ग–वर्ण का संबंध जन्म से कर दिया गया है वहीं शासन–प्रशासन कार्यकर्ताओं ने पदों को कर्म आधारित ना करके जन्म व वंश आधारित कर दिया। जिससे समाज में विसंगति फैल गई। वहीं भारत के बदलते राजनीतिक हालातों ने 12वीं शताब्दी से लगातार विदेशी वक्ताओं के सामने दम तोड़ दिया जिसकी बड़ी वजह बनी जाति, धर्म, सम्प्रदाय नस्ल व छुआछूत प्रथा क्योंकि भारतीय समाज अपने अनेक स्तर पर बढ़ चुका था।

जाति–

हालांकि जाति शब्द की उत्पत्ति का उल्लेख स्पष्टतापूर्वक नहीं मिलता है किन्तु आदिपुराण में (सातवीं शताब्दी में) एक भरत की कथा अर्थात् एक पौराणिक कथाओं में मानवीय व्यवहार को सामाजिक वर्ण विच्छेद के रूप में प्रस्तुत किया गया, ऐसा वर्णित है किन्तु समय परिवर्तन के हजारों वर्षों उपरान्त आज जाति शब्द को भारतीय उपमहाद्वीप के लोगों द्वारा भौगोलिक सांस्कृतिक पहचान के रूप में उपयोग किया जाता है किन्तु यदि मानवीय समाज के व्यावहारिक रूप में देखें तो कश्मीर से कन्याकुमारी व गुवाहटी से गांधीनगर तक जातिगत आधारों पर व्यवहार एक समान विसंगति भरा है जो आज भारतीय समाज व राजनीतिक संस्थान के समक्ष चुनौतिपूर्ण समस्या है।

सम्प्रदायिक व राष्ट्र–राज्य–

भारतीय उपमहाद्वीप की आध्यात्मिक व विविधता में एकता की प्राचीन पहचान रही है जिसे विश्व बंधुत्व के रूप में उदाहरणार्थ देखा जा सकता है। किन्तु निरन्तर बदले शासन संस्थानों व राजनीतिक नेतृत्व ने यहां की अहिंसक व भांतिपूर्ण सामाजिक संरचना में सम्प्रदायिकता की खीज उत्पन्न कर दिया। हालांकि

सूफी आंदोलनो, भक्तकाल की उत्पत्ति भी इसी शब्द की उत्पत्ति के खिलाफ एवं विपरीत थी। किन्तु नकारात्मक प्रवृत्ति, समाज पर भारी पड़ी। जिससे भारतीय उपमहाद्वीप में 17वीं, 18वीं एवं उपनिवेशवाद की 19वीं, 20वीं शताब्दी ने भारतीय सामाजिक संरचना को छिन्न–भिन्न कर दिया। इसी काल में द्विवेदी युग का (हिन्दी साहित्य का) निरासावादी दौर भी रहा। किन्तु सम्प्रदायिक एकता की सुनिश्चिता के लिए हिन्दी–उर्दू साहित्य के माध्यम से गंगा–जमुना तहजीब का उद्‌भाव हुआ किन्तु विदेशी शासन नीति 'फूट डालो और राज करो' की नीति के समक्ष भारत की धार्मिकता एकता व अखण्डता छूट गई और भारतीय उपमहाद्वीप मे द्वि–राष्ट्र सिद्धांत (1947) के क्रियान्वयन पर सदी का सबसे बड़ा सम्प्रदायिक टकराव व मानव विस्थापन देखा।

हिन्दी साहित्य का छायावादी युग भारतीय महाद्वीप में आधुनिक राजनैतिक चेतना–

भारत ने जहां राजनीति रूप से गुलामी वाली मानसिकता से संवैधानिक व विचारधारा से लड़ने का प्रयत्न किया, वहीं साहित्य की घोर निराशा को व्यक्त हिन्दी साहित्य ने समाज में आत्माभिव्यक्ति, लिंग असमानता पर प्रहार एवं विचारित लिंग प्रेम का सौंदर्यपूर्ण व प्रेमपूर्ण चित्रण, प्राकृति प्रेम के साथ–साथ राष्ट्रीय व सांस्कृतिक जागरण के उद्‌भाव में स्वच्छन्दतावाद की दार्शनिकता का बीजारोपण किया। क्योंकि भारतीय महाद्वीप विदेशी शासनगत नीति में शोषण आपकी हिंसा, एवं टूटती विविधता में व्यक्त हो गया था।

अतः 19वीं शताब्दी के अन्त में भारत में राजनैतिक हितों को साधने के लिए भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का गठन (1885) में हुआ। जिसकी स्थापन में देश के अनेकों अंचलों से राष्ट्रवादी नेतृत्वों ने भाग लिया, वहीं कांग्रेस का गठन पश्चिमी उदारवादी विचारधारा का परिणाम था, किन्तु इसके केन्द्र में भारतीय राष्ट्रवाद लक्षित था क्योंकि कांग्रेस के गठन के समय देश के प्रत्येक हिस्से से लोगो ने हिस्सा लिया। अतः सत्रहवीं शब्द से शुरू हुए राष्ट्रवाद का 19वीं शताब्दी में इसका स्वरूप तीसरी दुनिया (उपनिवेशवाद) के लिए राजनीतिक स्वतंत्रता व प्रभुसत्ता के रूप में बदल गया। भारतीय हिन्दी साहित्य एवं शिक्षा–प्रेमी समुदाय ने राष्ट्रवाद को देश की कई सौ वर्षों से निरासात्मक व शोषणकारी शासन झेल रही जनता के सम्मुख कविता, गद्य, पद्य, एवं दोहों के रूप प्रस्तुत किया, वहीं शिक्षा प्रेम समुदाय शिक्षण संस्थान एवं जनजागरण क्रियाक्रमों से राष्ट्रवाद की दिशा व दशा निश्चित की।

भारत जहां विविधता का स्वरूप इतना घना है, अर्थात् जाति, धर्म, भाषा, नस्ल, सम्प्रदाय आदि के आधार के साथ यहां भूगौलिक व सामाजिक सांस्कृतिक विविधता भी अत्यंत जटिल है। किन्तु भारतीय महाद्वीप की प्रमुख विशेषता है कि प्रत्येक समुदाय अन्य समुदाय की सांस्कृतिक व भाषा का सम्मान करता है और इसी परम्परा को 18वीं शताब्दी में और अधिक बदल मिला, जब राजा राममोहन राय ने भारतीय महाद्वीप में पुर्नजागरण को प्रस्तुत किया। अर्थात् बंगाल से मद्रास और मद्रास से बम्बई वं बम्बई से इलाहाबाद तक व्याप्त सामाजिक कुरीतियों के विनाश के लिए प्रयास किये। 19वीं शताब्दी के शुरूआत में राजा राममोहन राय की पहल का परिणाम था कि भारतीय महाद्वीप में राष्ट्रवाद का नया स्वरूप देखा। जिसकी प्राथमिकताओं में जातिगत भेदभाव, गंगा–जमुना तहजीब को प्रोत्साहन एवं लिंग भेदभाव समाप्त कर महिलाओं को राजनीतिक व सामाजिक स्वतंत्रता व समानता पर बल दिया गया।

छायावादी काल में राष्ट्रवाद का सांस्कृतिक और भावनात्मक दौर–

20वीं शताब्दी प्रथम से चौथे दशक तक हिन्दी साहित्य जहां द्विवेदी युग के निरासावादी काल से निकलने एवं तत्कालीन उपनिवेशवाद परिस्थितियों में देश में आधुनिक जागरण व राष्ट्रवाद की नवीन बीजारोपण पद्धति का प्रदुर्भाव किया, वहीं इस काल के कवियों की भावभूमि अलग–अलग अदा की थी किन्तु इनका एकीकृत स्वरूप इनकी अभिव्यक्ति के माध्यम से दिखाई देता है। जिसमें व्यक्तिनिष्ठता की भिन्नता का अंतराल सामाजिक व राजनीतिक स्थिति में प्रस्तुत होता है, जो कि विविधता में एकता का स्वरूप था। अर्थात् भारतीय भौगोलिक एवं सामाजिक विविधता का एकीकरण।

अतः इस छायावादी काल में राष्ट्रीयता की भावना का धरातल केन्द्र बिन्दु के रूप में रहा। इस काल में सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की भावना कई रूपों में अभिव्यक्त हुई है। अर्थात् प्राचीन गौरव की पुनरूत्थानवादी भावना, आर्य संस्कृति की ही जयकार है, लेकिन यह कहीं से भी संकीर्ण एवं सांप्रदायिक नहीं है। तत्कालीन भारतवासियों ने अपनी पराधीनता के अपमान को बखसा नहीं जिसका सर्वाधिक स्वरूप पुनरूस्थानवादी भावना जयशंकर की गद्य व पद्य धारा में दिखाई दिया।

उदाहरणार्थ–

अरूण यह मधुमय देश हमारा। (चन्द्रगुप्त, जयशंकर)

उक्त प्रस्तुति में जयशंकर ने पुर्नजागरण का राजनीतिक प्रस्तुतिकरण किया।

वहीं छायावादी युग में राष्ट्रीता की प्राथमिकता अभिव्यक्ति उन नेताओं की प्रशंसा के रूप में प्रकट हुई जिन्होंने देश का नेतृत्व किया था। छायावादी कवियों ने स्वाधीनता के लिए उद्‌बोधन गीत लिखा–

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती स्वयं समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती। (चन्द्रगुप्त, जयशंकर)

उक्त प्रस्तुति ने स्वतंत्रता व स्वाधीनता प्राप्ति में अपनी अमिट छाप छोड़ी। जिसने देश की स्वतंत्रता व संप्रभुता को सुदृढ़ता व स्थिरता प्रदान की।

छायावादी काल में जहां राष्ट्रवाद की **सर्वोच्चता एवं संप्रभुता** को एकीकृत किया वहीं जातिवाद एवं लिंग असमानता पर भी चोट की। अर्थात् छायावादी काल के लेखक समुदाय ने रूढ़िवाद एवं असामाजिक परम्परागत प्रचलन को आलोचित कर प्रकृति प्रेम, सद्‌भाव **समुदायिक प्रेम एवं लिंग व जाति सम्मान व समानता** का बीजारोपण किया।

जिसमें सुमित्रानंदन पंत की प्रस्तुति प्रमुख है–

मुक्त करो नारी को मानव! चिर बंदिनि नारी को युग–युग की कर्बर कारा से, जननि, सखि, प्यारी को। (युगवाणी, सुमित्रानंदन पंत)

वहीं तत्कालीन सामाजिक विसंगति पर सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने प्रस्तुति दी है–

"तुमने मुख फेर लिया सुख की तृष्णा से अपनाया है, गरल, हो बसे नव छाया में, नव स्वप्न ले जगे, भूले वे मुक्त प्राण साम–गान, सुधा–पान।"

अर्थात् मति भ्रष्ट एवं पद–दलित जाति तो अपनी सभ्यता और संस्कृति को क्षुद ही समझने लगती है। दूसरी ओर विदेशी अपनी संस्कृति की श्रेष्ठता प्रतिपादन करने में भारतीय समाज पर सफल हुए।

अतः भारतीय स्वतंत्रता प्राप्ति के संघर्ष में छायावाद हिन्दी साहित्य ने भारतीय राजनीति व समाज की विविधता में एकता का स्वरूप प्रदान करने एवं जाति, धर्म एवं लिंग की सम्मान व समानता की वरीयता भी केन्द्रीय रही। यदि साहित्य का विश्लेषात्मक निष्कर्ष देने लगे तो साहित्य या काव्य गद्य का रचनात्मक व्यवहार हर शताब्दी में शासन सत्ता के पक्ष व विपक्ष में शासन की नीति एवं व्यवहार के सन्दर्भ में जनकल्याण के लिए लिखित रहे है, जिसमें भक्तिकाल से लेकर वर्तमान आधुनिक साहित्यकारों के केन्द्र बिन्दु में राष्ट्र के एकीकरण एवं राष्ट्रवाद को सन्दर्भित करते रहे है। अतः साहित्य के आधुनिक प्रत्येक काल खण्ड (भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, छायावादी युग) में राजभक्ति व राष्ट्रवाद के संदर्भ में ब्रिटिश सरकार के साम्राज्यवादी सरकार के विरूद्ध मांग और स्वदेशी स्वराज की मांग का क्रमिक विकास हुआ। जिसमें छायावादी युग में राष्ट्रवाद व राजभक्ति के साथ–साथ सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ एक निश्चित व दार्शनिक हिन्दी साहित्य का युग रहा है। अतः वर्तमान जहां सूचना प्रौद्योगिकी व तकनीकी विकास ने अपनी चरमकाष्ठा प्राप्त की है वहीं समाज में जाति, धर्म एवं सम्प्रदाय के आधार विभेदकारी प्रवृत्तियों ने चुनौती प्रस्तुत की है इसलिए नितांत आवश्यक हो जाता है कि आधुनिक हिन्दी साहित्य राष्ट्रीय भक्ति के रूप में देश व्याप्त भ्रष्टाचार, गरीबी, बेकारी एवं स्वास्थ्य व स्वच्छता को समर्पित हो।

सारांश–

आज सूचना प्रौद्योगिकी का तकनीकी एवं वैश्विक ग्रामीण दौर हे, जिसमें प्राचीन सभ्यताओं में से भारतीय सभ्यता आज भी हिन्दी साहित्य एवं भारतीय महाद्वीप की अनेक क्षेत्रीय भाषाओं में जीवित है, अर्थात् भारतीय महाद्वीप में प्राचीन संस्कृति विविधता आज के भौतिकता युग में जीवित है। किन्तु अनेक विसंगति व धारणाओं के परम्परागत होने के बाद भारतीय नैतिकतावादी समाज आज अपनी ही लिंग, धर्म, जाति, छूआछूत की अमानवीय प्रथाओं से भर चुका है। जिसकी प्रमुख वजह इतिहासकार, शिक्षा पद्धति पर विशिष्टता का अधिकार, गैर–मुल्की व गैर–संस्कृतिक लूटेरों की शासनगत नीतियां, उपनिवेशवाद की शोषण व अविकासात्मक नीतियों का परिणाम रहा है। छायावादी हिन्दी साहित्य व राष्ट्रीय आंदोलनों ने परस्पर रूप से सामाजिक व राजनीतिक स्थिरता, सुदृढ़ता पर अथक व प्रासंगिक कार्यशौली रूप धारण कार्य किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

1. श्रीवास्तव परमानंद, समकालीन हिंदी आलोचन (2018), साहित्य अकाडेमी, रविन्द्र भवन, 35, फिरोजशाह मार्ग, नई दिल्ली–110001।
2. आहूजा, राम, भारतीय समाज (2016), रावत पब्लिकेशन, सेक्टर–3, जवाहर नगर, जयपुर–302004।
3. डॉ0 कीर्तिलता, भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन और हिन्दी साहित्य (1967), हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद।
4. उपाध्याय, विभा, राष्ट्र एवं राष्ट्रवाद की भारतीय अवधारणाः समीक्षा, 2018, केशव कुंज, झण्डेवालान, नयी दिल्ली–110005।
5. जयशंकर द्वारा रचित, 'चन्द्रगुप्त', 'कानन–कुसुम'
6. सूर्यकांत त्रिपाठी द्वारा रचित, 'गीतिका', 'अनामिका' एवं 'राम की शक्ति–पूजा'
7. प्रेमचन्द द्वारा रचित 'गबन'
8. सुमित्रानंदन पंत द्वारा रचित 'युगवाणी' आदि।
9. आजकल, (साहित्य और संस्कृति का मासिक प्रकाशन), जनवरी–फरवरी 2020, वर्ष–75, अंक 9–10, ISSN-0971-8478, आजकल प्रकाशन विभाग सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलैक्स लोदी रोड, नई दिल्ली–110003
10. www.hindivibhag.com
11. bharadiscovery.org